International Journal of Humanities and Social Science Research
ISSN: 2455-2070; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 14-11-2020; Accepted: 29-11-2020; Published: 14-12-2020
www.socialsciencejournal.in
Volume 6; Issue 6; 2020; Page No. 169-170

डॉ० राममनोहर लोहिया का आर्थिक दर्शन

डॉ. सुनीता कुमारी
History, B.N.M.U. Madhepura, Bihar, India

सारांश
लोहिया जी कहना था कि वैज्ञानिक युग में उत्पादन की वृद्धि एवं मशीनों का प्रयोग विकसित एवं विकासशील दोनों ही देशों के लिए न केवल आर्थिक बल्कि राजनीतिक और सामाजिक समस्या भी बन गयी है। लोहिया जी का विचार है कि विश्व के विभिन्न देशों में यदि आर्थिक विषमतायें है तो उसका अलग कारण है परंतु भारत में आर्थिक विषमता का मूल कारण है जाति व्यवस्था का होना।

मूलशब्द: डॉ० राममनोहर लोहिया, आर्थिक दर्शन, जाति व्यवस्था

प्रस्तावना

डॉ० राममनोहर लोहिया का आर्थिक दर्शन क्रांतिकारी एवं मौलिक था। डॉ० लोहिया के आर्थिक विचार उनके समाजवादी चिन्तन पर आधारित हैं। यह उनके मानवादी दृष्टिकोण की एक सशक्त अभिव्यक्ति हैं। उसके माध्यम से वे चाहते थे कि जाति, वर्ण, वंश, धर्म, लिंग, संस्कृति, सम्पत्ति आदि के भेदभाव से मुक्त एक ऐसी न्यायनिष्ठ सामाजिक व्यवस्था की स्थापना की जाए जो कर्म उद्‌भुत और व्यवहार से पुष्ट रहें। डॉ० लोहिया के आर्थिक दर्शन में पश्चिमी समाजवाद, गाँधीवाद मार्क्सवादी प्रभाव और भारतीय परम्पराओं के समन्वित योगदान को देखा जा सकता है। विश्व में जो आर्थिक उथल–पुथल का दौर चल रहा था उसे बहुत ही गहराई से समझने का प्रयास लोहिया ने किया था और भारत के संदर्भ में क्या बेहतर आर्थिक नीति हो सकती है इस पर चिंतन मनन किया था।

वैज्ञानिक युग में उत्पादन की वृद्धि एवं मशीनों का प्रयोग विकसित एवं विकासशील दोनों ही पेशों के लिए न केवल आर्थिक बल्कि राजनीतिक और सामाजिक समस्या भी बन गयी है।

लोहिया जी का विचार हैं कि विश्व के विभिन्न देशों में यदि आर्थिक विषमतायें हैं तो उसका अलग कारण हैं परंतु भारत में आर्थिक विषमता का मूल कारण है जाति व्यवस्था का होना। जाति व्यवस्था ने भारत में समाज को दो वर्गों में विभाजित किया हैं–शोषक वर्ग एवं शोषित वर्ग। शोषक वर्ग के पास सारी पूँजी और उत्पादन के साधन विद्यमान हैं। शोषक वर्ग के अन्तर्गत सामान्य तथा ब्राहमण, क्षत्रीय, कायस्थ, भूमिहार और कुछ अंश में ग्वाला, कोईरी, कुर्मी एवं बनिया आते हैं। इन्हीं लोगों में अधिकांश जमींदार हैं एवं सम्पन्न घराने के हैं। सारे समाज की पूँजी इन्हीं के हाथों में एकत्रित हो गयी हैं। कुछ बनिया एवं मारवाड़ी पूँजीपति हैं परंतु इन लोगों में जमींदार की तरह शोषण करने की क्षमता नहीं हैं। सामान्य तथा द्विज जाति लोग ही समाज के ऊपर आधिपत्य स्थापित किये रखते हैं। समाज का सारा सम्मान तथा कुछ सुविधायें उन्हीं के चारों तरफ घूमती हैं। द्विज जाति के अन्तर्गत गरीबों की मात्रा कम हैं। अधिकांश गरीब शुद्र वर्ण के अन्तर्गत आनेवाले विभिन्न जातियों के हैं। ये लोग गरीबीं की रेखा के नीचे का जीवन बिता रहे हैं। वास्तव में हजारों वर्षो से इनकी मानसिकता गरीबी का ही जीवन बिताने की हो गई हैं। यह मानसिकता जल्दी दूर नहीं होगी। सामाजिक दृष्टिकोण से आर्थिक विषमता जाति व्यवस्था पर ही अवलंबित हैं। भारत में जैसे–जैसे जाति व्यवस्था समाप्त होगी आर्थिक विषमतायें भी वैसे–वैसे समाप्त होती जाएगी।

लोहिया जी कहते हैं

''उत्तर हिंदुस्तान के अहीरों और चमारों ने भी शायद पर्याप्त जागरूक न रहते हुए मराठों जैसे ही प्रत्यत्न किये हैं। उन्हें असफल होना ही था, पहले तो इसलिए कि उत्तर में द्विज बहुत बड़ी संख्या में हैं और दूसरे इसलिए कि उत्तर की नीची जातियों के बीच संख्या में वे उतने शक्तिशाली नहीं हैं। इसके बावजूद कुछ दब कर प्रयत्न हो ही रहा है। कई मानों में जनतंत्र हैं संख्या ही शासन। ऐसे देशों में जहाँ समुदायों का संसर्ग जन्म और पुरानी परम्परा के आधार पर होता है। सबसे ज्यादा संख्या वाले समुदाय राजनीतिक और आर्थिक विशेषाधिकार प्राप्त कर ही लेते हैं। संसद और विधायिकाओं के लिए उन्हीं के बीच से उम्मीदवारों का चयन करने के लिए राजनीतिक दल उनके पीछे मागते रहते हैं। व्यापार और नौकरियों में अपने हिस्से के लिए ये ही सबसे ज्यादा शोर मचाते हैं। इसके परिणाम बहुत ही भयंकर होते हैं। सैकड़ो नीची जातियो जो संख्या में प्रत्येक कमजोर हैं पर सबमिलाकर आबादी का बहुत बड़ा तबका है, निश्चल हो जाती है। जाति पर हमले का मतलब होना चाहिए उन्नति न कि सिर्फ किसी एक तबके की उन्नति। एक ही तबके की उन्नति से जातिप्रथा के अंदर कुछ रिश्ते परिवर्तित होते हैं, किंतु जातियों के आधार पर कोई बदलाव नहीं आता।

एक तबके की उन्नति घातक होती है। नीची जातियों के लोग ऊँची जगहों पर पहुँच जाते हैं। वे मौजूदा ऊँची जातियों में घुल–मिल जाना चाहते हैं। इस प्रक्रिया में वे ऊँची जगहों पर पहुँचने के बाद सभी जानते हैं कि नीची जाति के लोग कैसे ऊपरी औरतों को परदे में कर देते हैं। जो कि ऊँची उच्च जाति में नहीं होता बल्कि निचली उच्च जाति में होता ही है। इसके अलावा ऊँची उठने वाली नीची जातियां द्विज की तरह जनेऊ पहनने जगती हैं, जिससे वे अबतक वंचित रखे गये, लेकिन जिसे अब सच्ची ऊँची जाति उतारने लगी है।

इस सबसे भेदभाव जारी रखने का एक और नतीजा मिला। इसके अलावा, इस तरह की उन्नति से वे अपने ही समुदाय से अलग हो जाते हैं। इस उन्नति को अच्छे गुण सीखने या योग्य बनाने का ठेका नहीं मिलता, बल्कि जाति की जलन भड़काने और लड़ाने–भिड़ाने का ठेका मिलता है। पुनः लोहिया जी कहते हैं कि :–

'लोग यूरोप और गोरों से सीखे हुए समान अवसर के सिद्धांत रहते हैं, चाहे वे कांग्रेसी हो अथवा साम्यवादी, क्योंकि उन्होनें आखिर फ्रांस, रूस जैसे देशों से ही अपनी क्रांति सीखी हैं। वे नहीं जानते कि जात प्रधान हिंदुस्तान क्या है। कई हजार वर्षो से जात के श्रम विभाजन के कारण योग्यता, गुण और संस्कार के अटूट जैसे विभाग बन गये हैं। समान अवसर नहीं, बल्कि विशेष अवसर ही इन दीवारों को तोड़ सकते हैं। औद्योगीकरण के इलाज, योग्यता और संस्कार के इस हजार–बरसी परम्परा के खिलाफ नकारा है। खुद आर्थिक बराबरी के इन्कलाब की नेताई ऊँची जात के गरीब मर्द करते, क्योंकि उनमें नेताई का गुण और संस्कार हजारों वर्षो की परम्परा से आ चुके हैं। विशेष अवसर के सिद्धांत के सहारे ही इन आर्थिक कारणों की नेताई घुली–मिली होगी। कुछ छोटी जात की और कुछ ऊँची जात के गरीब मर्दो की तभी सच्ची और आधुनिक क्रांति होगी।

लोहिया जी का कहना है कि द्विज जाति के लोग विशेष रूप से शोषण करते हैं। यह शोषण कई रूपों में होता हैं जैस प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष इसमें संपन्न घराने की अन्य जातिया भी सहयोगी बन गयी है। इस शोषण को समाप्त करना बड़ा ही कठिन कार्य है।

शोषण के कारण शुद्र जातियां बेजान हो गयी है। अथक परिश्रम करने के बाद भी वे दो जून का भोजन नहीं जुटा पाती है। दिन पर दिन उनका आर्थिक ह्रास हो रहा है। आर्थिक ह्रास के कारण समाज में विचित्र ढ़ंग से आर्थिक विषमता उत्पन्न हो गयी है। समाज का एक वर्ग जहाँ विलासित का जीवन बिता रहा है। वहीं पर दूसरा वर्ग भूखे नंगे रहने के लिए बाध्य हो गया है। लोहिया जी भारत की इस सामाजिक व्यवस्था के लिए जाति प्रथा के अतिरिक्त अन्य किसी को उत्तरदायी नहीं ठहराते हैं।

लोहिया ने औधोगीकरण और बड़े बाँधों से सम्बंधित नेहरू की चिंता की खिल्ली उड़ाई। उनके अनुसार उनके निर्माण में सिर्फ द्विजों को लाभ हुआ और शुद्रों के अधिकांश लोगों को कोई फायदा नहीं हुआ। जाहिर हैं, इनसे शुद्रों के लिए जो रोजगार के अवसर और आय अर्जित करने की क्षमता पैदा हुई उसे लोहिया भूल गए। उनका कहना था कि यह ब्राहमण–बनिया गठबंधन है जो विकास के नाम पर देश को लूट रहा है।

लोहिया ने घोषणा की ''मैं बिड़ला–नेहरू के गठबंधन और एकाधिपप्य का नाश चाहता हूँ। लोहिया ने वशिष्ठ परम्परा जिसे वे भारत की प्रगति और समृद्धि के रास्ते में सबसे बड़ा रोड़ा समझते थे, इसके खिलाफ देशवासियों को संदेश दिया कि वशिष्ठवाद को जड़ से खोद फेंको। उन्होंने दूसरो को मताहत में रखने के लिए प्रशासनिक कार्यो में अंग्रेजी का इस्तेमाल जारी रखने को द्विजों का एक चतुर हथकंडा करार दिया। अंग्रेजी को देश से निकालने का यह सबसे उपयुक्त समय था।

लोहिया ने एक ऐसे राजनीतिक दल के निर्माण पर बल दिया जिसमें औरत, शूद्र, हरिजन और मुसलमान का आधिपप्य हों द्विजों को उसमें शामिल किया जा सकता है लेकिन उन्हें प्रमुख के स्थानों को दखल करने की इजाजत नहीं दी जानी चाहिए। सोशलिस्ट पार्टी को ऐसे दल के रूप में अपने आपको तब्दील कर लेना चाहिए। शूद्रों के महत्व पर जोर देते हुए लोहिया ने यह चेतावनी भी दी ''यह सही है कि सत्ता की छोटी जगहों पर बैठा दिए जाने पर शुद्र शुरू में द्विजों की अपेक्षा अधिक निर्दय हो जाए। जेल में जब कोई चमार या पासी, कलवार या अहीर बंदी पहरेदार बना दिया जाता है तो वह जैसी गाली–गलौज और मार–पीट करता है वैसी गाली–गलौज और मारपीट द्विज बंदी पहरेदार नहीं कर सकता है। इसी प्रकार एक हरिजन अफसर लगातार तनाव और अनिर्णय की स्थिति में रहता है और वह यह सब साबित करने के लिए हमेशा तप्पर रहता है कि वह किसी मामले में द्विज से कमजोर नहीं है। वह प्रतिष्ठा की उसी पागलपन वाली रव्वाहिश से ग्रस्त रहता है।''

निष्कर्षत

आर्थिक विकेंद्रीकरण के प्रति लोहिया के मन में कोई भी संशय नहीं था और उनका मानना था कि भारत में जैसे देश में बिना इसके गरीबी, सामाजिक न्याय, सामाजिक विषमता, पर्यावरण से जुड़े संकट इत्यादि से निजात नहीं पाया जा सकता। उत्पादन बढ़ाने हेतु मशीनों का प्रयोग हों, समाजवादी भवधारा मार्क्सवाद, वैश्विक अर्थव्यवस्था इत्यादि सभी विषयों पर लोहिया के चिंतन क्रांतिकारी एवं मौलिक थे।

संदर्भ सूची

1. समता और सम्पन्नता, सम्पादक ओंकार शरद् लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद
2. बिहार में सामाजिक परिवर्तन के कुछ आयाम प्रसन्न कुमार चौधरी–श्रीकांत वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
3. श्रीमति इन्दुमति केलकर, लोहिया कर्म और सिद्धांत, इलाहाबाद, 1983.
4. डॉ० ब्रजकुमार पांडेय गिरीश मिश्र, डॉ० राममनोहर लोहिया व्यक्ति और विचार, दिल्ली, 2006.
5. लोहिया, मर्यादित, उन्मुक्त व्यक्तित्व और रामायण मेहता की संकल्पना, हैदराबाद 1969
6. इतिहास चक्र, डॉ० राम मनोहर लोहिया, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2007.
7. सप्तक्रांति, डॉ० राममनोहर लोहिया, प्रकाशन राधाकान्त यादव, पटना।
8. गैर कांग्रेसवाद और समाजवाद, लोहिया, प्रकाशन राधाकान्त यादव, पटना।